International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 4; Issue 3; May 2018; Page No. 01-04

आंबेडकर के विचारो का मार्क्सवादी व्याख्या

विकास प्रकाश
Azim Premji University, Bengaluru, Karnataka, India

प्रस्तावना

मै विकाश प्रकाश आज आपके पास आंबेडकर के विचारो का मार्क्सवादी व्याख्या कर रहा हूँ. हो सकता है की इसमें मुझसे कुछ त्रुटि हो जाये इसलिए मै उम्मीद करता हूँ की आप लोगो के सहयोग से मैं इसे सुधारने में सफल भी रहूँगा। इसको लिखने में मैंने रामविलास शर्मा, डॉ. आम्बेडकर संपूर्ण वाङ्मय,जाति प्रथा का विनाश, उनके भाषणों पर लिखित लेख आदि पुस्तकों की सहायता ली है। और आंबेडकर की व्याख्या करते समय उनके विचार और भारतीय इतिहास की समस्या को केंद्र में रखा है।

अधिकांश लोग मानते है की आर्य बाहर से आकर भारत में ऋग्वेद की रचना की। आंबेडकर ये तथ्य नहीं मानते है और सिद्ध करते है की आर्य यही के मूल निवासी थे। एक धारणा यह भी प्रचारित की गयी थी की आर्य बाहर से आकर द्रविड़ को शूद्र बनाया और वर्ण व्यवस्था में शूद्र प्राचीन द्रविड़ो की संतान है. आंबेडकर ने इस धरना का भी विरोध किया।समाज की भौतिक परिस्थितियों को पहचानते हुए उन्होंने बताया की यह प्रथा केवल भारत में ही नहीं, भारत के बहार भी है। किन्तु उनका झुकाव सिर्फ सिर्फ इस धारणा पे रहा की यह विशेषता सिर्फ हिन्दू की विशेषता है. हिन्दू धर्म पे वो आछेप भी लगते है की ब्राह्मणो ने इसे दैवी प्रथा बना के इसे जड़ बना दिया। लेकिन सायमन कमीशन के आने के बाद उनमे कुछ परिवर्तन दिखाई देता है। उसके पहले उनकी विचारधारा दूसरे ढंग की है। एक समय उन्होंने पाकिस्तान का समर्थन भी किया। जाति की परिभासा देते हुए उन्होंने मुसलमानो को भी एक जाति बताया।असल मे जाति का अर्थ कुल मिलाकर इतना ही यह है कि साझा हित की समझ निर्मित होने के पहले ही लोगों को छोटे छोटे खांचों में (जातियों में) तोड़ दिया जाए। उन्हें कार्य, विवाह और भोजन आदि के अलग अलग अनुशासन दे दिए जाएं। इसका सीधा अर्थ है कि जब तक जातियां अपने आर्थिक हितों के साझेपन को नहीं पहचानेंगी तब तक उनमे साझेदारी और साझे हित की समझ नहीं जन्मेगी। इसका सीधा अर्थ है कि बहुजन अपनी जातीय अस्मिता से वर्गीय अस्मिता की तरफ बढ़ेंगे तो उन्हें फायदा होगा।अंबेडकर की जाति उन्मूलन की प्रस्तावना में भी जातियों के बीच परस्पर सम्मान और निकटता अपेक्षित है। यह तभी संभव है जबकि जाति से वर्ग की तरफ वाया वर्ण यात्रा की जाए। और इसकी एक अनिवार्य शर्त ये भी है कि विभाजन को दैवीय नियम बनाने वाले धर्म और संस्कृति के सम्मोहन को तोड़ने का प्रयास भी समानांतर चलता रहे।इस बिंदु पर अंबेडकर, लोहिया और मार्क्स में एक संगति नजर आती है।

किन्तु आज़ादी के बाद संविधान सभा में अपने कार्यो का विवरण देते हुए जो भाषण दिया वो महत्वपूर्ण है क्योकि उन्होंने बताया की राजनितिक अधिकार कागज पे रह जायेंगे यदि आर्थिक समानता स्थापित न की गयी तो। वो जानते थे की वास्तविक जनतंत्र तब तक स्थापित नहीं किए जा सकते है जब तक पूरी सम्पति सिर्फ कुछ पूंजीपतियों के हाथ में रहती है। [1]1942 में आल इंडिया रेडियो से उन्होंने एक भाषण प्रसारित किया था। उसमे उन्होंने कहा था : भारत में इस समय केवल मजदुर वर्ग ही सही राजनितिक नेतृत्व दे सकता है। मजदुर वर्ग में अनेक जाती थी। आंबेडकर की विचारधारा यहाँ जाति-विभेद मिटाती है यहाँ वो जाति प्रथा को संगठन का आधार नहीं बनती है। यहाँ वो छुआ-छूत को मिटते हुए वर्ग की बात कहते है.

आंबेडकर का एक लेख बुद्धा और मार्क्स पर है।[2] वह प्रायः भौतिकवादी दृष्टिकोण से समस्याओ पे विचार करते है। सामाजिक विवेचन में ईश्वर के दखल के लिए हिन्दुओ को जिम्मेवार मानते है। इसलिए वो बौद्ध धर्म में परिवर्तित होने के बाद भी पुरोहितवाद का विरोध करते है बौद्ध धर्म में भी। अतः हम कह सकते है की उनकी वर्ग-चेतना उनकी जाति-सम्बन्धी धारणाओं से बार-बार टकराती है। एक जगह वो कहते है की रुसी क्रांति में हिंसा बहुत हुई जो बहुत बुरी बात है परन्तु अगर थोड़ी सी हिंसा से ही सम्पति सर्वहारा में बाँट दी जाती हो, समाज से असामनता दूर कर दी गयी हो तो उसे बुरा नहीं कहना चाहिए। बुद्ध के चिंतन में उन्हें कुछ खामिया दिखाई दी थी। जैसे यदि मनुस्य में आत्मा नहीं है तो फिर दूसरे जन्म में उसे कर्म के बंधन कैसे बांधते है ?

1948 में आंबेडकर की पुस्तक ' द अनटचेबल ' प्रकाशित हुई। उसमे उन्होंने कहा की " द्रविड़ शब्द तमिल का ही रूपांतरण है। तमिल केवल दक्षिण भारत की ही नहीं,वरन पुरे भारत की भासा थी। इसकी स्थापना के लिए उन्होंने बी. आर. भंडाकर का हवाला दिया है। द्रविड़ो का दूसरा नाम नाग था। उतर भारत में नागो ने अपनी भाषा छोड़ कर आर्यो की भाषा स्वीकार किया जबकि बाकी दक्षिण भारत में तमिल ही नाग लोगो की भाषा रही। भारत में मुख्या रूप से दो नस्ले थी -आर्य और नाग। नाग शब्द नस्ल या संस्कृति का सूचक है। "

यहाँ दो नस्लों का सिद्धांत मानते हुए वर्णभेद के लिए नस्ल के भेद को आधार नहीं माना है बल्कि नाक के नाप-जोख को आधार बनाया। भारत में जाति-बिरादरी और नस्ल पर धुर्वे की पुस्तक से लम्बा उद्धरण देने के बाद उन्होंने कहा," पंजाब के अछूतो की नाक की बनक, उत्तर प्रदेश के ब्राह्मणो के नाक के गठन एक ही है। " परिणाम यह है कि नस्ल-भेद पहचानने के लिए खोपड़ी, नाक आदि की नाप-जोख करके वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन किया जाये तो लोग किसी नस्ल के आधार पर अछूत बने गए , यह सिद्धांत निरस्त हो जाता है.उनका कहना था की पहले लोग गण समाजो के आधार पर (ट्राइबल बेसिस) पर संगठित थे। परन्तु प्रत्येक गण, कुलो, गोत्रो आदि में विभाजित था। इन गोत्रो और कुलो का अध्ययन आवश्यक है।

आंबेडकर कहते है कि [3] यदि मार्क्सवादी अपने पूर्वाग्रहों को पीछे रखकर बुद्ध का अध्ययन करें और उन बातों को समझें जो उन्होंने कही हैं और जिनके लिए उन्होंने संघर्ष किया, तो मुझे यकीन है उनका दृष्टिकोण बदल जाएगा। वास्तव में उनसे यह आशा नहीं की जा सकती कि बुद्ध की हँसी व मजाक उड़ाने का निश्चय करने के बाद वे उनकी प्रार्थना करेंगे, परंतु इतना कहा जा सकता है कि उनको यह महसूस होगा कि बुद्ध की शिक्षाओं व उपदेशों में कुछ ऐसी बात है, जो ध्यान में रखने के योग्य और बहुत लाभप्रद है।मार्क्सवादी सिद्धांत को उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में जिस समय प्रस्तुत किया गया था, उसी समय से इसकी काफी आलोचना होती रही है। इस आलोचना के फलस्वरूप कार्ल मार्क्स द्वारा प्रस्तुत विचारधारा का काफी बड़ा ढांचा ध्वस्त हो चुका है। इसमें कोई संदेह नहीं कि मार्क्स का यह दावा कि उसका समाजवाद अपरिहार्य है, पूर्णतया असत्य सिद्ध हो चुका है। सर्वहारा वर्ग की तानाशाही सर्वप्रथम 1917 में, उसकी पुस्तक दास कैपिटल, समाजवाद का सिद्धांत

के प्रकाशित होने के लगभग सत्तर वर्ष के बाद सिर्फ एक देश में स्थापित हुई थी। यहां तक कि साम्यवाद, जो कि सर्वहारा वर्ग की तानाशाही का दूसरा नाम है, रूस में आया तो यह किसी प्रकार के मानवीय प्रयास के बिना किसी अपरिहार्य वस्तु के रूप में नहीं आया था। वहां एक क्रांति हुई थी और इसके रूस में आने से पहले भारी रक्तपात हुआ था तथा अत्यधिक हिंसा के साथ वहां सोद्देश्य योजना करनी पड़ी थी। शेष विश्व में अब भी सर्वहारा वर्ग की तानाशाही के आने की प्रतीक्षा की जा रही है। मार्क्सवाद का कहना है कि [4] समाजवाद अपरिहार्य है, उसके इस सिद्धांत के झूठे पड़ जाने के अलावा सूचियों में वर्णित अन्य अनेक विचार भी तर्क का अनुभव, दोनों के द्वारा ध्वस्त हो गए हैं। अब कोई भी व्यक्ति इतिहास की आर्थिक व्याख्या को ही इतिहास की केवल एकमात्र परिभाषा स्वीकार नहीं करता। इस बात को कोई स्वीकार नहीं करता कि सर्वहारा वर्ग को उत्तरोत्तर कंगाल बनाया गया है और यही बात उसके अन्य तर्क के संबंध में भी सही है।

कार्ल मार्क्स के मत में जो बात बच रहती है, वह बची-खुची आग की तरह है, जो मात्रा में तो बहुत थोड़ी, लेकिन बहुत ही महत्त्वपूर्ण होती है - अग्नि के एक पतंग व अवशेष के समान है। इस रूप में मेरे विचार में ये चार बातें हैं [5]:

1. दर्शन का कार्य विश्व का पुनर्निर्माण करना है, विश्व की उत्पत्ति का स्पष्टीकरण देने या समझाने में अपने समय को नष्ट करना नहीं।
2. एक वर्ग का दूसरे वर्ग के साथ स्वार्थ व हित का टकराव व उनमें संघर्ष का होना है।
3. संपत्ति के व्यक्तिगत स्वामित्व से एक वर्ग को शक्ति प्राप्त होती है और दूसरे वर्ग को शोषण के द्वारा दुःख पहुंचाया जाता है।
4. समाज की भलाई के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्तिगत संपत्ति का उन्मूलन करके, दुःख का निराकरण किया जाए।

जहां तक वर्ग संघर्ष के प्रति बुद्ध के दृष्टिकोण का संबंध है, अष्टांग मार्ग का उनका सिद्धांत इस बात को मान्यता देता है कि वर्ग संघर्ष का अस्तित्व है और यह वर्ग संघर्ष ही है, जो दुःख व दुर्दशा का कारण होता है।यदि हम यह समझ लें कि दुःख का कारण शोषण है, तब बुद्ध इस विषय में मार्क्स से दूर नहीं हैं।नियमों के अनुसार एक भिक्षु केवल निम्नलिखित आठ वस्तुओं को ही व्यक्तिगत संपत्ति के रूप में रख सकता है। इनसे अधिक नहीं । [6] ये आठ वस्तुएं इस प्रकार हैं :

1.2.3. प्रतिदिन पहनने के लिए तीन वस्त्र (त्रिचीवर),
4. कमर में बांधने के लिए एक पेटी (कटिबांधनी),
5. एक भिक्षापात्र,
6. एक उस्तरा (वाति),
7. सुई धागा, और
8. पानी साफ करने की एक छलनी या छन्ना (अलक्षाधक)

इसके अलावा एक भिक्षु के लिए सोने या चांदी को प्राप्त करना पूर्णतया निषिद्ध है, क्योंकि इससे यह आशंका होती है कि सोने या चांदी से वह उन आठ वस्तुओं के अलावा, जिनको रखने की उसे अनुमति है, कुछ और वस्तुएं खरीद सकता है।

आंबेडकर यह भी कहते है कि [7] रूसी विचारक अपने साम्यवाद पर गर्व करते हैं, परंतु वे भूल जाते हैं कि सबसे बड़ा आश्चर्य यह है कि बुद्ध ने, जहां तक संघ का संबंध है, उसमें तानाशाही-विहीन साम्यवाद की स्थापना की थी। यह हो सकता है कि वह साम्यवाद बहुत छोटे पैमाने पर था, परंतु वह तानाशाही-विहीन साम्यवाद था, वह एक चमत्कार था, जिसे करने में लेनिन असफल रहा।बुद्ध का तरीका अलग था। उनका तरीका मनुष्य के मन को परिवर्तित करना, उसकी प्रवृत्ति व स्वभाव को परिवर्तित करना था, ताकि मनुष्य जो भी करे, उसे स्वेच्छा से बल-प्रयोग या बाध्यता के बिना करे। मनुष्य की चित्तवृत्ति व स्वभाव को परिवर्तित करने का उनका मुख्य साधन उनका धम्म (धर्म) था तथा धम्म के विषय में उनके सतत उपदेश थे। बुद्ध का तरीका लोगों को उस कार्य करने के लिए, वे जिसे पसंद नहीं करते थे, बाध्य करना नहीं था, चाहे वह उनके लिए अच्छा ही हो। उनकी पद्धति मनुष्यों की चित्तवृत्ति व स्वभाव को बदलने की थी, ताकि वे उस कार्य को स्वेच्छा से करें, जिसको वे अन्यथा न करते।

हम ये कह सकते है कि मार्क्सवादियों की बराबर शिकायत रही है कि दलित मार्क्सवाद के सामने खुद को असहाय पा कर सिर्फ मार्क्सवादी नेतृत्व को ब्राह्मणवादी, सवर्णवादी इत्यादि कहकर अपनी भड़ास निकालते रहते हैं.उनके ऐसा कहने पर दलितों का नुकसान यह हुआ है कि आम लोगों में यह सन्देश चला गया है कि वे मार्क्सवाद विरोधी हैं, जोकि गलत है. .जिस दिन स्टालिन की मृत्यु हुई थी उस दिन उन्होंने शोक स्वरूप पूरे दिन उपवास रखा था.बहरहाल आंबेडकर ने अपने संघर्ष में मार्क्सवाद को सिद्दांत के रूप में क्यों नहीं स्वीकार किया, इसके कारण एकाधिक रहे .उनमें जाति आधारित समाज में मार्क्सवाद की सैद्धांतिक अनुपयुक्तता के अतिरिक्त प्रमुख कारण था भारतीय साम्यवादी आन्दोलन पर ब्राह्मणों का वर्चस्व.जिन ब्राह्मणों ने आगे बढाकर मार्क्सवाद का नेतृत्व अपने हाथों में ले लिया था उनके नेतृत्व में दबे कुचले लोगों की लड़ाई नहीं लड़ी जा सकती,ऐसा दृढ विश्वास था डॉ. आंबेडकर का.इसके लिए उन्होंने वंचित वर्गों को सावधान करते हुए कहा था-

‘यदि ब्राह्मणों से आरम्भ करें जोकि भारत में शासक का एक दृढ व शक्तिशाली वर्ग है,तो यह कहने में अतिशयोक्ति नहीं होगी कि वे भारत में हिंदुओं की कुल जनसंख्या के 80 या 90 प्रतिशत दीन वर्ग अर्थात शूद्रों तथा अछूतों के सबसे प्राचीन व हट्ठी (inveterate) शत्रु हैं’. (डॉ. बाबासाहेब राइटिंग्स एंड स्पीचेज,वाल्यूम-9,पृ-467). ’उनसे (ब्राह्मणों) यह आशा करना कि वे जापान के समुराइयों की भांति अपने सभी विशेषाधिकारों को त्याग देंगे, आकाश कुसुम प्राप्त करने की कल्पना जैसा होगा… देश में हम सबसे अधिक दबा-कुचला वर्ग हैं.इसका अर्थ है कि हमें आत्मविश्वास के साथ अपनी लड़ाई स्वयं लड़नी है-(वही,पृ-469).’ ‘राज्य के साधनों के चुनाव के समय साधनों के वर्ग-पक्षपात के विचार को नकारा नहीं जा सकता.इसकी पहचान सबसे पहले कार्ल मार्क्स ने की और पेरिस कम्यून की दौरान इस पर विचार किया.यह बताना आवश्यक हो गया है कि इस समय सोवियत रूस की सरकार का आधार यही है.भारत में वंचित वर्ग द्वारा रखी गई आरक्षण की मांग आवश्यक रूप से मार्क्स द्वारा बताये और रूस द्वारा अपनाये गए इसी विचार पर आधारित है…दीन वर्ग के हितों के रक्षक के रूप में दीन वर्ग के व्यक्तियों पर ही विश्वास किया जा सकता है.और यह विचार इतना महवपूर्ण है की दक्षता के के सिद्धांत को भी इस पर हावी नहीं होने दिया जा सकता.'(वही,पृ-481).

मेरे विचारो में ‘मनुवादी ब्राह्मण केवल एक ही उद्देश्य लेकर मार्क्सवादी बने और वह उद्देश्य था मार्क्सवाद का अपहरण करना तथा संस्कृतिकरण के नाम पर समूची विचारधारा का हिन्दुकरण.अपने हितों की सुरक्षा की सुरक्षा के लिए ब्राह्मण नेता 1920 से ही मार्क्सवाद का नाम लेकर दो प्रकार से कार्य कर रहे थे.प्रथम शीघ्र सत्ता हस्तांतरण की सौदेबाजी के लिए वे अंग्रेज अधिकारियों को सर्वहारा क्रांति का भय दिखा रहे थे और दूसरे डॉ.आंबेडकर तथा पेरियार इत्यादि के सबल नेतृत्व में तेज़ी से उभरते भारत के जन्मजात वंचितों के क्रांतिकारी आन्दोलन को हानि पहुचाने और उसकी दिशा को मोडने की चेष्टा कर रहे थे .' बिस्वास साहब 'मार्क्सवाद की दुर्दशा' में पृ-23 पर लिखते हैं-‘मार्क्सवाद को अपहरण करनेवाले ब्राह्मणी – व्यस्था के पोषक साम्यवादी अपने वर्ग व जातिय प्रस्थिति से भली-भांति परिचित थे.उन्हें इस बात का पूर्ण आभास था कि शासक वर्ग होने के कारण वे साम्यवादी आन्दोलन के लिए नितांत अयोग्य हैं.अतः उन्होंने अपनी मार्क्सवाद विरोधी जातिय स्थिति की चुनौती का सामना करने के लिए एक उपयुक्त शब्दावली ‘वर्गहीन'(declassed) का आविष्कार किया.भारतीय मार्क्सवादी इस शब्दावली का इस्तेमाल शासक जाति के उन सदस्यों के लिए करते हैं जो मार्क्सवाद का प्रचार तथा अनुसरण करते हैं.ऐसा इसलिए करते हैं ताकि उनके वर्ग को वैध सामाजिक स्थिति प्रदान की जा सके.वे

घोषणा करना चाहते हैं कि यद्यपि वे ब्राह्मण हैं किन्तु वर्ग-हीन होकर वे सर्वहारा की स्थिति में आ गए हैं.इस प्रकार मार्क्सवाद को अपहरण करनेवाले शासक वर्ग के लोग मार्क्सवाद के प्रचार=प्रसार का अधिकार प्राप्त कर साम्यवादी बन गए.

1913 और 15 के बीच कोलंबिया विश्वविधालय में उन्होंने प्राचीन भारतीय व्यापार पे शोध पत्र लिखा था कि कारीगरों को पगार मिटी थी इसलिए वो मन लगाकर काम करते थे। परिणाम यह होता था की उद्योग धंधो का विकास हुआ। इसी पगार प्रथा के कारण भारत में इतना बिकाऊ माल तैयार होता था और दूसरे देशो में पहुँचता था। इसी प्रथा के बल पर प्राचीन काल में भारत साड़ी दुनिया के लिए माल तैयार करने का कारखाना बन गया था।

आंबेडकर कहा करते थे [8] की श्रमिक वर्ग के प्रत्येक सदस्य को रूसो के "सोशल कॉन्ट्रैक्ट", मार्क्स के "कम्युनिस्ट मैनीफेस्टो", पोप लियो तेरहवें के "एनसाईक्लीकल ऑन द कंडीशनस ऑफ़ लेबर" और जॉन स्टुअर्ट मिल के "लिबर्टी" से परिचित होना चाहिए। ये उन ग्रंथों में से चार हैं, जो आधुनिक दुनिया के समाज और शासन व्यवस्था के संगठन के मूल कार्यक्रम से सम्बंधित हैं .यह उद्धरण डॉ. आंबेडकर के भाषण 'लेबर एंड पार्लियामेण्टरी डेमोक्रेसी' से लिया गया है, जो उन्होंने 8 सितम्बर से 17 सितम्बर 1943 तक चले ऑल इंडिया ट्रेड यूनियन वर्करर्स के अध्ययन शिविर के समापन सत्र में दिया था। जो डॉ. आंबेडकर मार्क्स के कम्युनिस्ट घोषणापत्र को मजदूर वर्ग के लिए पढ़ना आवश्यक मान रहे हों, उन पर यदि मार्क्सवादी खेमे से यह आरोप लगाया जाता है कि उनका आंदोलन मार्क्सवाद को कमजोर कर रहा था तो इसका अर्थ सिवाय इसके और क्या हो सकता है कि उन्होंने डॉ. आंबेडकर को पढ़ना जरूरी ही नहीं समझा। वे दलितों से तो यह अपेक्षा करते हैं कि वे मार्क्स को पढ़ें और मार्क्सवाद से जुड़ें। पर वे स्वयं न आंबेडकर पढ़ना चाहते हैं, न समझना। यह एक विडम्बना है, जिसके परिणाम स्वरूप ही भारत में कम्युनिस्ट आंदोलन असफल रहे हैं।डॉ. आंबेडकर इससे सहमत हैं कि उद्योगों में निजी स्वामित्व का पूर्ण उन्मूलन जरूरी है। लेकिन यह उन्मूलन किस तरह होगा? डॉ. आंबेडकर यहां कम्युनिस्टों के इस तरीके से सहमत नहीं हैं कि सर्वहारा क्रांति इसे धीरे-धीरे करेगी और वह निजी स्वामित्व को तभी मिटा सकेगी जब उत्पादन के साधनों का आवश्यक परिमाण में निर्माण हो जाएगा।यहां निजी स्वामित्व का इतिहास और उसकी अवधारणा उस इतिहास और अवधारणा से भिन्न है, जिसे मार्क्स और एंगेल्स ने निरूपित किया है। भारत में वर्ण व्यवस्था ने उद्योग, व्यापार और व्यवसाय करने का अधिकार सिर्फ वैश्य वर्ण या वर्ग को दिया है। इस प्रकार यहां पूंजी का केंन्द्रीकरण उस हिन्दू अर्थ व्यवस्था की देन है, जो वर्ण व्यवस्था के रूप में हिन्दुत्व का प्राण है। इस वर्ण व्यवस्था को समाप्त किए बिना निजी स्वामित्व को मिटाना सम्भव नहीं है जबकि भारत में वर्ण व्यवस्था को सुरक्षित रखने के लिए पूंजीपतियों द्वारा तमाम उपक्रम किए जा रहे हैं।

[9] मार्क्सवाद जनवाद को निजी स्वामित्व पर प्रहार करने तथा सर्वहारा का अस्तित्व सुनिश्चित करने के लिए जो कार्यवाहियां सम्पन्न करने का साधन के रूप में इस्तेमाल करता है, वे कार्यवाहियां इस प्रकार हैं –

1. उत्तराधिकार के उन्मूलन तथा अनिवार्य ऋण आदि साधनों से निजी स्वामित्व को सीमित करना।
2. भूस्वामियों, कारखानेदारों, रेलों और जहाजों के स्वामियों की सम्पति को, राजकीय उद्योग की ओर से होड़ के जरिए और करेन्सी नोटों में मुआवजे की अदायगी के जरिए धीरे-धीरे छीन लेना।
3. बहुसंख्यक जनता के खिलाफ विद्रोह करने वालों की सम्पति छीन लेना।
4. कारखानों में सर्वहाराओं के श्रम या व्यवसाय का संगठन करना और जब तक कारखानेदार मौजूद रहते हैं, उन्हें ऊंची मजदूरी देने के लिए बाध्य करना, जितनी राज्य देता है।
5. निजी स्वामित्व का पूर्ण उन्मूलन होने तक समाज के तमाम सदस्यों के लिए काम करने की समान अनिवार्यता।
6. निजी बैंकों को बंद कर राजकीय बैंकों का गठन।
7. राष्ट्रीय कल कारखानों, वर्कशाप, रेलों और जलपोतों की संख्या में वृद्धि, बिना जोती जमीन की काश्त तथा पहले से जोती जमीन का सुधार
8. तमाम बच्चों को बड़े होते ही राष्ट्रीय संस्थानों में राष्ट्रीय खर्च पर शिक्षा, जो उत्पादन से जुड़ी हो।
9. परिवहन के तमाम साधनों का राष्ट्र के हाथों में संकेन्द्रण।

यहां मैं डॉ. आंबेडकर के उन सवालों को रखना जरूरी समझता हूं, जो उन्होंने कम्युनिस्ट क्रांति के संदर्भ में उठाए थे। इन सवालों पर चर्चा श्री सोहन लाल शास्त्री ने अपनी 'पुस्तक बाबा साहेब के सम्पर्क में मेरे पच्चीस वर्ष' में विस्तार से की है। उनके अनुसार डॉ. आंबेडकर कहते हैं, अगर कल कम्युनिस्ट भारत में अपनी राज्य सत्ता स्थापित कर लेते हैं, तो उन्हें भी अपना शासन चलाने के लिए तीन चीजों की आवश्यकता होगी। [10] पहली आवश्यकता प्रशासन चलाने वाली मशीनरी की, अर्थात सिविल अफसरों की, दूसरी आवश्यकता होगी – सेना की और तीसरी आवश्यकता होगी श्रम अर्थात् श्रमिकों की। वे मौजूदा अफसरों, सेना तथा श्रमिकों से ही काम चलाएंगे। इस समय प्रशासन और सेना का सारा संगठन सवर्ण हिन्दुओं का है। यही सवर्ण अधिकारी कल अंग्रेजी राज में सत्ता सम्पन्न थे। यही आज कांग्रेस के राज में सत्ता सम्पन्न हैं और यहीं कल को कम्युनिस्ट राज में भी सत्ता सम्पन्न बन कर रहेंगे। भारत की अछूत जन जातियां तथा पिछड़ा वर्ग शूद्र जिस तरह सत्ता सम्पन्न न कल थे और न आज हैं, उसकी प्रकार वे कम्युनिस्ट राज में भी नहीं रहेंगे।उन्होंने कहा कि लोकतंत्र का सार 'एक व्यक्ति एक मूल्य' का सिद्धांत है। दुर्भाग्य से लोकतंत्र में 'एक व्यक्ति एक मत' का सिद्धांत अपना कर सिर्फ राजनैतिक ढांचे तक ही इसे लागू करने का प्रयास किया गया है उन्होंने कहा कि होना यह चाहिए था कि लोकतंत्र में एक व्यक्ति एक मूल्य का सिद्धांत अपनाया जाता है और उसके अनुरूप संविधान में समाज के आर्थिक ढांचे के आकार और स्वरूप को भी निर्धारित किया जाता। उन्होंने कहा कि अब समय आ गया है कि हम साहसी कदम उठाएं और संवैधानिक कानून के द्वारा समाज के आर्थिक और राजनैतिक दोनो ढांचों को परिभाषित करें [11]। वास्तव में डॉ. आंबेडकर की राज्य समाजवाद की अवधारणा, खास तौर से कृषि के क्षेत्र में आज भी क्रांतिकारी है। भारत के अन्य समाजवादी विचारकों में कोई भी, यहां तक कि नेहरू और लोहिया भी कृषि क्षेत्र में ऐसा परिवर्तन नहीं चाहते थे। नेहरू ने केवल भूमि सुधारों की आवश्यकता पर जोर दिया था, जबकि लोहिया कृषि क्षेत्र में किसी परिवर्तन के पक्षधर नहीं थे। एम.एन. राय की पार्टी ने भी कृषि क्षेत्र में ऐसी किसी योजना पर विचार नहीं कियास था, जो आर्थिक परिवर्तन लाये। यह डॉ. आंबेडकर ही थे, जिन्होंने कृषि का औद्योगिकरण किए जाने की मांग की थी [12]

डॉ. आंबेडकर की समाजवादी अवधारणा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसके केंद्र में सिर्फ मजदूर और गरीब वर्ग है। वहां सवर्ण और दलित तथा हिन्दू और मुलसमान का भेद नहीं है। वे धर्म, सम्प्रदाय, वर्ण, जाति और लिंग के आधार पर मजदूर मजदूर में कोई भेद नहीं करते हैं। डॉ. रामविलास शर्मा ने ठीक लिखा है कि एक मजदूर नेता के रूप में डॉ आंबेडकर में जाति के भेद पीछे छूट गए थे। [13] वे सिर्फ वर्गों की बातें करते हैं और मजदूर वर्ग के हाथों में देश का नेतृत्व देखना चाहते हैं।उन्होंने स्वतंत्रता, समानता और बंधुता के सूत्र इसी क्रांति से लिए थे। [14] उन्होंने 1942 में अपने रेडियो वार्ता में, जो 'वाई इंडियन लेबर इज डिटरमिन्ड टू विन द वार' शीर्षक से उनकी रचनावली में संकलित है, कहा है कि मजदूर वर्ग को स्वाधीनता, समानता और बंधुता की आवश्यकता है। उन्होंने इन तीनों सिद्धांतों को मजदूर वर्ग की दृष्टि से देखा। उन्होंने कहा कि इन सिद्धांतों को लेकर मजदूर वर्ग की अवधारणाएं बहुत स्पष्ट हैं। उन्होंने कहा मजदूर वर्ग के लिए स्वाधीनता का अर्थ है जनता के द्वारा शासन। लेकिन, उन्होंने कहा कि इसका अर्थ संसदीय लोकतंत्र नहीं है। संसदीय लोकतंत्र वह व्यवस्था है, जिसमें जनता अपने मालिकों को वोट देकर उन्हें अपने ऊपर शासन करने के लिए छोड़ देती है। उन्होंने कहा कि मजदूर वर्ग वह सरकार

चाहता है, जो नाम से ही नहीं, हकीकत में भी जनता के द्वारा शासित हो। उसके लिए स्वाधीनता का अर्थ है सबके लिए समान अवसर और यह कि राज्य प्रत्येक व्यक्ति को उसकी जरूरत के अनुसार विकास के लिए सारी सुविधाएं प्रदान करें।

अगर हम इन साड़ी चीजों को आज के परिपेछय में देखेंगे की आज मार्क्स आंबेडकर के साथ खड़े नज़र आते है जिस प्रकार अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निरोधक) अधिनियम 1989, को कानूनी तरीके से लगभग अमान्य कर दिया गया हम ऐसा कह सकते है कि क्या अब दलितों की मार्क्सवादी व्याख्या भी शुरू हो गयी है ?जहा ये माना जाता है की अब दलितों ने एक वर्ग में जगह बना ली है और उनकी व्याख्या वैसी ही होनी चाहिए जैसी एक सामान वर्ग में आने वाले सभी वर्गों के साथ होती है।सुप्रीम कोर्ट ने साफ किया है कि ऐसे मामले में अब पब्लिक सर्वेंट की तत्काल गिरफ्तारी नहीं होगी। इतना ही नहीं गिरफ्तारी से पहले आरोपों की जांच जरूरी है और गिरफ्तारी से पहले जमानत भी दी जा सकती है।अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय के लोगों के साथ दूसरे समुदाय के व्यक्ति से किसी बात को लेकर मामूली कहासुनी पर भी एससीएसटी एक्ट लग जाता था। एक्ट के नियमों के तहत बिना जांच किए अारोपी की तत्काल गिरफ्तारी हो जाती थी। अारोपी को अपनी सफाई अौर बचाव के लिए लंबी कानूनी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता था। ये सब के दिए दिए गए तर्क है। इन सारे मुद्दों पे जहा सरकार को कम से कम अटॉर्नी जनरल को कोर्ट में भेजना चाहिए था लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ। और उन्होंने एक अपने असिस्टेंट को भेजा। इससे पता चलता है कि सरकार इस मामले में संवेदनशील इसलिए मै यहाँ आपके पास कुछ सवाल छोड़ के जाता. [15] आज के समय में हम मार्क्स और आंबेडकर को अगर एक साथ देखेंगे तो इन सारी समस्याओं को और बेहतरी से समझ सकते है. उस समय हमे दो दृस्टिकोणो को एक में मिला के निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न करना होगा

संदर्भ

1. डॉ. बाबासाहेब आम्बेडकर रायटिंग एंड स्पीचेज वाल्यूम 10, पृष्ठ 110
2. हिन्दी कलम, सम्पादक नीलकांत, जनवरी जुलाई 1996 में मधु लिमये का लेख
3. बौद्ध धर्म प्रचारक, मार्च 2002
4. मार्क्स एंगेल्स संकलित रचनाएं खंड 1, भाग 1, पृ. 97
5. बौद्ध धर्म प्रचारक, मार्च 2002, पृ. 13
6. बाबा साहेब राइटिंग एंड स्पीचेस, वा. 10, पृ. 43
7. कल के लिए (दलित साहित्य विशेषांक) सम्पादक डॉ. जय नारायण, दिसम्बर 1998 में डॉ. रामविलाश शर्मा का लेख पृ. 8
8. बाबा साहेब राइटिंग एंड स्पीचेस, वाल्यूम 10, पृ. 100
9. डॉ. आम्बेडकर संपूर्ण वाङ्मय, खंड 9, पृ. 39
10. बाबा साहेब आम्बेडकर राइटिंग एंड स्पीचेस वाल्यूम 10, पृष्ठ 126
11. डॉ. आम्बेडकर संपूर्ण वाङ्मय, खंड -2, पृ.267
12. कृपया मूल पाठ के लिए देखिए, बा.सा.आ. राईटिंग एंड स्पीचेस, वाल्यूम 1, पृ. 396-97
13. डॉ. आम्बेडकर संपूर्ण वाङ्मय, खंड 2, पृ. 108
14. वायस ऑफ बुद्धा, सम्पादक उदित राज, (16-31 मई 2002) में ज्ञान सिंह बल का लेख, पृष्ठ 7
15. कल के लिए (दलित साहित्य विशेषांक) दिसंबर 1998, पृ. 10